International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 5, May2019
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

भारतीय परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक साहित्य महत्व एवं स्वरूप

Lakshmi v.
Asst Professor,
Ramaiah Degree College, Bengalor.

भारत की सबसे पुरानी भाषा का श्रेय संस्कृत भाषा को प्राप्त है। ले कन तुलनात्मक साहित्य के उद्भव एवं वकास में संस्कृत भाषा का कोई महत्वपूर्ण योगदान नहीं है। इसका एक कारण यह हो सकता है क संस्कृत के वद्वानों ने अन्य भारतीय भाषाओं को समतुल्य नहीं माना हो या प्रत्येक कोई रु च न रखा हो। हमारी आधुनिक भाषाओं के उदभव के साथ-साथ इस दिशा में तुलनात्मक अध्ययन की संभावनाएं दिखाई पड़ी। सन् 1753 में अपनी 'आक्सफर्ड लेक्चर ऑफ पोयट्री में जब रॉबर्ट लाउथ ने हिब्रू क वता के साथ यूनानी क वता की तुलना की तब भारतवर्ष में देवभाषा संस्कृति की क वताओं के साथ देसी या वदेशी भाषाओं में र चत क वता की तुलना एक अभावनीय व्यापार थी इसी लए भारत में भारतीय फारसी तथा अरबी क वताओं के तुलनात्मक अध्ययन का अवकाश नहीं था। यद्य प 18वीं षती में संस्कृत , देसी भाषा अथवा अरबी , फारसी जानने वाले वद्वान हमारे देश में मौजूद थे , इसी लए 19वीं षती के अंत में जब इस देश में आधुनिक साहित्यक पं डत्य का प्रसार हुआ तब हमारे यहां तुलनात्मक साहित्यक अध्ययन की कोई प्रथा ही नहीं थी।

असल में भारतीय भाषाओं के साथ अन्य यूरोपीय भाषाओं की रचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन यूरोपीय वद्वानों ने शुरू कया। अंग्रेजों के आने के बाद ही हम पश्चात्य के प्रभाव में आए और अंग्रेजी भाषा के प्रादुर्भाव से हमारे साहित्य में तुलनात्मकता का कार्य शुरू हुआ। हमारे वद्वानों ने हमारे भारतीय साहित्य की तुलना अन्य भारतीय भाषाओं से न करके अंग्रेजी भाषा से ही करना उ चत समझा इसका कारण यह था क वे मानते थे क इससे बौ द्धक दृष्टि से यह ज्यादा लाभदायक था यह निश्चित है क अंग्रेजी साहित्य के प्रति हमारे आग्रह के फलस्वरूप हमारी साहित्यिक दृष्टि का वकास हुआ और हमने एक बृहत्तर परिप्रेक्ष्य में साहित्य को ग्रहण करने की को शश की।

बंगाल के वख्यात क व माइकेल मधुसूदन (1825 1873) ने एक ऐसे समन्वित साहित्यक-जगत की कल्पना की थी। जिसमें यूरोप तथा भारत के क वयों को एक ही मंच पर स्थान दिया जाए। अपने एक मत्र को पत्र लखते हुए उन्होंने कहा था क मैं वाल्मी क, व्यास, का लदास,, होमर, वर्जिल दाते, टेसे तथा मल्टन के अतिरिक्त दूसरे कसी भी क व की क वता नहीं पढ़ता हूँ। यह महत्व की बात है क 1860 में जब माइकेल ने यह बातें कही थी यूरोप में उसी वर्ष 'व्हाट इज क्ला सक? निबंध में सेंत व्यूय क वता की सार्दिक दृश्टि का प्रसार कर रहे थे। माइकेल मधुसूदन ने एक साहित्य-अध्ययन की एक नई आलोचनात्मक पद्धति की ओर संकेत कया था। जो एक राष्ट्रीय साहित्य के अध्ययन

से जुड़ी हुई आलोचनात्मक रचनात्मक पद्धति से भन्न थी। इससे यह पता चलता है क भारत में पहली बार तुलनात्मक आलोचना के नए मॉडल का संकेत देने वाले माइकल ही थे। अपने एक पत्र में उन्होंने लखा था क यूरोपीय नाटक में जहां जीवन के कठोर यथार्थ, उदात्त आवेग तथा वीर रस का परिचय मलता है वहीं भारतीय नाटक में प्रेम और कोमलता का।

ब कम बाबु ने तुलनात्मक आलोचना का प्रसार करते हुए शेक्स पयर को का लदास से ज्यादा महत्वपूर्ण नाटककार माना। 1873 में बं कंम द्वारा र चत एक निबंध जिसका शीर्षक था। शकुंतला मरांडा तथा डंसडोमना (बं कम रचनावली- 2) इस प्रकार के तुलनात्मक अध्ययन से एक लाभ यह भी हुआ क राष्ट्रवादी चंतन से मुक्त होकर सा र्वक स्तर पर साहित्य के मूल्यांकन की ओर हमारा रुझान दिखाई पड़ा। ध्यान देने की बात यह है क जब यूरोप में तुलनात्मक साहित्य का प्रसार हो रहा था , उस समय भारत के बं कम बाबू जैसे साहित्यकार यूरोपीय साहित्य के ऐतीह्य को अपने इतिहास का अंग स्वीकारते हुए वश्व नागरिक बनने का अ धकार प्राप्त कर रहे थे और तुलनात्मक अध्ययन को भारत में बढ़ावा दे रहे थे। बं कंमचंद्र ने अपने निबंधों में चरित्र चत्रण से भवभूति और शेक्स पयर की तुलना की अथवा अति प्रकृति के वश्लेषण की दृष्टि से 'कुमारसंभव' तथा 'पैरडाइज लॉस्ट' का ववेचन कया , अथवा भक्ति एवं श्रृगारिकता के आश्रय से वद्यापति और जयदेव की तुलना की तब उन्होंने व भन्न साहित्यिक दुनिया को खं डत न मानकर एक इकाई के रूप में उसे स्वीकार कया और इस तरह से एक ऐसी चेतना का प्रसार कया जिसके फलस्वरूप आगे चलकर भारत में व्यवहार्य अनुशासन के रूप में तुलनात्मक साहित्य का प्रसार हो सका।

गर्ल्स वेल कंस द्वारा अनूदित भगवतगाीता की भू मका लखते हुए भारत वर्ष के प्रथम गवर्नर जनरल वारन हैस्टिंग्स ने गीता के धर्म तत्वों की इसाई मुक्ति भावना से तुलना की थी। और साहित्यिक मूल्यांकन की दृष्टि से गीता के वनज पर इ लयट , ओडीसी तथा पैराडाइज लॉस्ट का उल्लेख कया था।''

साहित्येतिहास के क्षेत्र में भारतीय साहित्य को एक इकाई के रूप में स्वीकार नहीं करने पर भी भारत की व भन्न आधुनिक भाषाओं के स्वतंत्र इतिहास का अध्ययन करते हुए इन यूरोपीय वद्वानों ने आवश्यकताओं के अनुसार यूनानी , लातिन तथा यूरोपीय साहित्य के साथ इनकी तुलना की और अध्ययन के परिप्रेक्ष्य को वस्तार दिया। अलब्रेख बेचर ने अपने ग्रंथ द हिस्ट्री ऑफ इं डयन लटरेचर 1852 में संस्कृत ड्रामा पर यूनानी प्रभाव की छावनी की है और इसाई धर्म गीत के साथ संस्कृत धा र्मक श्लोक की तुलना की है। 1859 में मैक्स मूलर द्वारा र चत हैट्रिक आल एन षेट संस्कृत लटरेचर में सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टिकोण से संस्कृत तथा यूनानी साहित्य के इतिहास के अध्ययन की बात कही गई है और दोनों के दृष्टिकोण को क्रमश निवृत्ति और प्रवृत्ति मूलक कहा गया है। इस प्रकार की मतधारा पर आलोचनात्मक टिप्पणी की काफी गुंजाइश है मगर

महत्वपूर्ण बात यह है क इस प्रकार के अध्यन से तुलनात्मक साहित्य की नींव गहरी होती जा रही थी।

ए.बी कीथ ने अपनी पुस्तक द संस्कृत ड्रामा (1924) में यह लखा है क का लदास अथवा दूसरे संस्कृत नाटककारों की मनोवृत्ति ही ऐसी थी क वे यथार्थ नाटक रच नहीं सकते थे। कीथ ने यह बात वक्टोरियन युग के प्रकृतवाद के प्रभाव में कही थी।

भारतीय तुलनात्मक साहित्य की प्रारं भक अवस्था में यूरोपीय वद्वानों ने यूरोपीय साहित्य की तुलना में भारतीय साहित्य का मूल्यांकन करते हैं अ धकतर द्वैत वृत्ति का परिचय दिया है। इस द्वैध वृत्ति से मुक्त होकर वश्व साहित्य के प्रति एक स्वस्थ धारणा का प्रसार बहुत ही आवश्यक था जो तुलनात्मक साहित्य के द्वारा ही संभव हो सकता था। एवं जिसकी ओर पहले पहल मनियर व लयम्स ने वद्वानों का ध्यान आक र्षत कया था।

मध्ययुगीन भारतीय साहित्य के अध्ययन में यूरोपीय वद्वानों ने सही मायने में भारतीय भाषाओं के व भन्न साहित्यों के आश्रय से तुलनात्मक पद्धति का परिचय दिया था। चार्ल्स ई ग्रोवर ने अपनी पुस्तक 'द फोक सोग्स ऑफ सदर्न इं डया', 1871 में त मल साहित्य के साथ-साथ कन्नड़ , तेलुगु, मलयालम तथा कूर्ग भाषाओं में र चत गीतों का उल्लेख करते हुए इन्हे एक ही वर्ग की क वता प्रमा णत कया है। इस प्रकार आलोचनात्मक फ्रेमवर्क के आधार पर जी. यू पोप कुलर के अनुवाद की भू मका में यह कहते है क त मल क वता में छोटे-छोटे ष्लोकों की सूक्तिनुमा सं क्षप्तता के साथ यूनानी सूक्तिबद्ध क वताओं की वषय वस्तु अनुभूति तथा जिस सामाजिक परिवेश में ये क वताएं लखी गई है, उस परीवेष की तुलना की जा सकती है।

दरअसल तुलनात्मक साहित्य की आलोचनात्मक पद्धति से परि चत न होने के कारण अ धकतर भारतीय वद्वान इसके वास्त वक रूप को उभारने में असमर्थ रहे हैं , फर भी इस दिशा में बुद्धदेव बोस , नरेश गुह, नगेंद्र, आर के दास गुप्त , बी अल्फ़ोन्सो कारकला वी. के. गोलाक, डॉ.. हरभजन संह, एवर्ड सी, डीमॉक, जीनोली, के आर श्रीनिवास आयंगाार आदि वद्वानों का कार्य सराहनीय है।

आज तुलनात्मक साहित्य का प्रसार प्रचार पश्चिम से कही अ धक भारत में दिखाई पड़ता है। भारत का बहू भा शक देश होना इसका एक बहुत बड़ा कारण है। इसके अतिरिक्त उत्तर आधुनिक युग में अपनी भाषा के प्रति हरेक को सचेतनता का प्रसार होने से व भन्न भाषाओं के साहित्य को वस्तार मला है और वश्व वद्यालयों में भाषाओं का अध्ययन एकक के साथ तुलनात्मक रूप लेने लगा है। ऐसी भी भारत तुलनात्मक साहित्य क्षेत्र है और साहित्य के अध्ययन का तुलनात्मक होना भारत में एक स्वाभा वक प्रवृत्ति है। उत्तर आधुनिक देसीवाद से जुड़ी सचेतनता के वस्तार के फलस्वरूप भारत के व भन्न वश्व वद्यालयों में भी तुलनात्मक साहित्य पद्धति के आश्रय भारतीय साहित्य के अध्ययन अध्यापन को स्थान मला है।